Research Vidyapith International Multidisciplinary Journal

(International Open Access, Peer-reviewed & Refereed Journal)

(Multidisciplinary, Monthly, Multilanguage)

* Vol-3* *Issue-9* *September 2026*

www.researchvidyapith.com ISSN (Online): 3048-7331

भारतीय ज्ञान परंपरा और हिंदी साहित्यः चेतना, ज्ञान–दृष्टि और ऐतिहासिक विकास

डॉ. ममता रावत

पीएच.डी, हिन्दी, इंदिरा गांधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय

Article Info: *(Recieved- 09/07/2026, Accept- 15/08/2026, Published- 10/09/2026)*

DOI- 10.70650/rvimj.2026v3i9008

सारांश–

हिंदी साहित्य केवल आध्यात्मिक ज्ञान तक सीमित नहीं रहा। भारतीय ज्ञान परंपरा यदि विचार धारा है, तो हिंदी साहित्य वह विशाल जलाशय है जिसमें यह धारा निरंतर बहती और संचित होती रही है। हिंदी साहित्य ने अतीत के शास्त्रीय ज्ञान को केवल सुरक्षित ही नहीं रखा, बल्कि उसे युगानुकूल बनाकर समाज के लिए व्यावहारिक और प्रासंगिक भी बनाए रखा है। हिंदी साहित्य ने भारतीय ज्ञान के मूल तत्वों में अद्वैत चेतना, लोकमंगल, प्राकृतिक सहअस्तित्व, वैज्ञानिक प्रेक्षण और सामाजिक समानता समाहित है।

बीज शब्द– भारतीय ज्ञान परंपरा, हिंदी साहित्य, चेतना. विकास क्रम, अद्वैत।

प्रस्तावना–

भारतीय ज्ञान परंपरा केवल धार्मिक या दार्शनिक मान्यताओं का संकलन मात्र नहीं है, बल्कि यह मानव जीवन, प्रकृति, और समाज को समझने की एक अत्यंत वैज्ञानिक, तार्किक, और एकीकृत जीवन–दृष्टि है। इस परंपरा की सबसे बड़ी विशेषता इसकी श्ज्ञान–मीमांसा में निहित है, जहाँ ज्ञान को किसी एक वर्ग, जाति या कालखंड तक सीमित न रखकर लोकानुभव और शास्त्र के निरंतर संवाद से समृद्ध किया गया। श्रुति, स्मृति, दर्शन, आयुर्वेद, खगोल विज्ञान, गणित, स्थापत्य और भाषाशास्त्र जैसे क्षेत्रों से निकलकर भारतीय ज्ञान परंपरा लोकजीवन में समाहित हुई। यह ज्ञान परंपरा कभी बंद या कूपमंडूक नहीं रही। इसमें प्रश्न पूछने, तर्क और शास्त्रार्थ की समृद्ध परंपरा रही है।

भारतीय ज्ञान परंपरा और हिंदी साहित्य का संबंध बीज और वृक्ष की तरह है। जहाँ भारतीय ज्ञान परंपरा दर्शन, विज्ञान, जीवन–मूल्यों और लोक–विवेक का मूल स्रोत है, वहीं हिंदी साहित्य उस ज्ञान को सहेजने, समृद्ध करने और जन–जन तक पहुँचाने वाला सबसे सशक्त भंडारगृह है। प्रथम विश्व हिंदी सम्मेलन में यूनेस्को का प्रतिनिधित्व कर रहे श्री अशर डिलियान ने सम्मेलन की पूर्ण सफलता की आशा व्यक्त करते हुए कहा था– ष्सबसे अधिक प्रयोग की जानेवाली भाषाओं में हिंदी का स्थान विश्वभाषाओं की तुलना में तीसरा है। भारत में राष्ट्रीय पाषा की दृष्टि से हिंदी का स्थान सर्वोपरि है और दस से अधिक देशों में विद्यमान विभिन्न समुदाय इसका प्रयोग करते हैं। इसका साहित्य ज्ञान, दर्शन, कविता, कला एवं विज्ञान का एक बहुत बड़ा भंडार है। निश्चय ही भविष्य में हिंदी भारत में व्यापक जन–भाषा बनेगी। विश्व–भाषा के रूप में ज्ञान एवं संस्कृति के आदान–प्रदान की दृष्टि से इसका विकास हो सकेगा।[1] भारतीय ज्ञान परंपरा केवल धार्मिक मान्यताओं या पूजा–पद्धतियों का समूह नहीं है, बल्कि यह हज़ारों वर्षों के अनुभव, शोध, अवलोकन और चिंतन से विकसित हुई एक वैज्ञानिक, एकीकृत और व्यवहार–उन्मुख जीवन– दृष्टि है। जिज्ञासा और तर्क का समावेश दिखता है। शास्त्रार्थ, हेतुशास्त्र (तर्क) और स्वतंत्र प्रश्न पूछने की खुली परंपरा रही है।

एकीकृत दृष्टिकोण होने से यह परंपरा भौतिक विज्ञान (खगोल, गणित, आयुर्वेद, कृषि) और आध्यात्मिक दर्शन (अद्वैत, योग, सांख्य) को अलग–अलग न मानकर जीवन को संपूर्णता में देखती है तथा लोकमंगल की भावना इसका मूल उद्देश्य है जिसमें सर्वजन हिताय, सर्वजन सुखाय और प्रकृति के साथ सामंजस्य बिठाकर जीना है। लेखिका कुमुद शर्मा लिखती हैं कि– "भारतीय ज्ञान–परंपरा के कुछ मूलभूत तत्व हैं जो भारत के 'स्व' गठित करते हैं। हमारी आध्यात्मिक शक्ति, हमारी परंपरा, हमारी स्मृति, हमारा देश बोध, हमारा इतिहास बोध, ईश्वर, प्रकृति, संस्कृति। यह 'स्व' बोध ही भारतबोध है।[2]

ऐतिहासिक रूप से ज्ञान की भाषा संस्कृत, पालि या प्राकृत रही थी। परंतु जब यह शास्त्रीय चिंतन लोक–जीवन से जुड़ने लगा, तो हिंदी और उसकी विविध बोलियों (अवधी, ब्रज, मैथिली, सादुक्कड़ी, खड़ी बोली) ने इस पूरे ज्ञान–कोष को अपने भीतर समाहित कर लिया भारतीय ज्ञान परंपरा का मूल केंद्र बिंदु अद्वैत चेतना, वसुधैव कुटुंबकम् और लोकमंगल की भावना है। यह ज्ञान केवल पुस्तकीय ज्ञान नहीं, बल्कि व्यावहारिक जीवन का आचरण था। "हिंदी का अपना एक जनपदीय इतिहास और सांस्कृतिक चेतना है, उसकी अपनी एक साहित्यिक धारा है जो ब्रज, अवधी, मैथिली आदि बोलियों के भीतर एक अंतः सलिला की भांति प्रवाहित है और जो हिंदी जनपद को एक निश्चित इकाई के रूप में बांधती है।"[3]

जब हम इस परंपरा के संप्रेषण और संवर्धन का अध्ययन करते हैं, तो ज्ञात होता है कि यदि संस्कृत इस ज्ञान परंपरा की आधारशिला थी, तो हिंदी और उसकी बोलियाँ (अवधी, ब्रज, मैथिली, अपभ्रंश, साधुक्कड़ी) वह विशाल माध्यम बनीं जिसने इस उच्च दर्शन और विज्ञान को जन–जन तक पहुँचाकर सर्वग्राह्य बनाया।

हिंदी भाषा का इतिहास और विकास क्रमः वैदिक संस्कृत से आधुनिक हिंदी तक

हिंदी साहित्य और भाषा का विकास कोई अचानक घटी घटना नहीं है, बल्कि यह तीन हजार वर्षों की भाषाई और सांस्कृतिक निरंतरता का परिणाम है। भारतीय ज्ञान परंपरा को संवहित करने में हिंदी के इस विकास क्रम की केंद्रीय भूमिका रही है।

१. संस्कृत, पालि, प्राकृत और अपभ्रंश की विरासत

वैदिक और लौकिक संस्कृत जहाँ उच्च शास्त्रीय ज्ञान की भाषा थी, वहीं पालि और प्राकृत ने बौद्ध और जैन दर्शन को जन–जन तक पहुँचाकर ज्ञान का लोकतंत्रीकरण किया। इसके पश्चात अपभ्रंश काल (६०० ई. से १००० ई.) आया, जिसे हिंदी का बाल्यकाल कहा जा सकता है। सिद्धों और नाथों ने अपभ्रंश और प्रारंभिक हिंदी (अवहट्ट) के माध्यम से संस्कृत के जटिल कर्मकांडों पर चोट की और सीधे आत्मानुभव के ज्ञान को प्रधानता दी। इस काल में भाषा के रूप में हम संपन्न थे तथा ब्राह्मी से होते हुए देवनागरी लिपि से भारतीय ज्ञान परंपरा संपन्न हुई है। भाषाविद्ध भोलानाथ तिवारी कहते हैं– "लिपि भाषा का वह स्थायी रूप है जो सदियों तक अक्षुण्ण रह सकता है तथा मानव की सभ्यता के विकास में भाषा के इसी लिखित रूप का महत्त्व सर्वोपरि है।[4] भारतीय ज्ञान परंपरा को संकलित रखने में लिपि का अपना योगदान है।

भारतीय ज्ञान परंपरा में हिंदी साहित्य का मौलिक योगदान

हिंदी साहित्य ने केवल पुरानी ज्ञान परंपरा का अनुवाद या पुनरावृत्ति नहीं की, बल्कि उसने उसमें क्रांतिकारी, रेडिकल और लोक–उन्मुख संशोधन किए। लेखिका कुमुद शर्मा लिखती हैं कि– "भारतीय ज्ञान–परंपरा हमारी तीसरी आँख है। जो हमें जीवन का अर्थ समझाती है। हमें सिखाती है कि जीवन कैसे जिया जाए। जीवन को कैसे पढ़ा जाए। भारतीय ज्ञान–परंपरा एक ऐसी विराट मंजूषा है जिसमें ज्ञान, भक्ति, रीति, नीति, शिक्षा , मनोरंजन का गुणवतायुक्त खजाना है। जिसमें एक कारीगर के बोध के साथ मनुष्य को गढ़ने की पूरी सामग्री है।[5]

भारतीयता एक जीवन दृष्टि है, भारतीय जीवन शैली और पद्धति को हम वसुधैव कुटुम्बकम् के रूप में ओर अधिक विस्तार दे सकते हैं। भारतीयता की यह जीवन दृष्टि अपने उदारत्व के लिए जानी जाती है जिसमें सभी भारतीय भाषाओं का अपना अपना योगदान है। भारतीयता को समृद्ध करने में प्रत्येक भारतीय भाषा की भूमिका रही है। उत्तर से दक्षिण की तरफ देखें या पूर्व से पश्चिम की ओर सभी भाषाओं ने अपने अपने भीतर तमाम ज्ञान के स्रोतों को संग्रहित किया हुआ है। हिंदी भाषा इन सभी भाषाओं में आज के काल खंड के हिसाब से सर्वमान्य और जानी पहचानी है जिसकी पहुँच सुदूर पहाड़ों से होते हुए कन्याकुमारी के किनारों तक है। संस्कृत ज्ञान परंपरा की सबसे बड़ी सीमा यह थी कि वह एक विशिष्ट वर्ग तक सीमित होने लगी थी। हिंदी साहित्य का सबसे

बड़ा ऐतिहासिक योगदान यह है कि उसने ज्ञान को देववाणी के बाड़े से निकालकर जनवाणी के बहते स्रोत में बदल दिया। दूसरी, तीसरी और चौथी गद्दियों के गुरुओं की रचनाएँ अधिकांश हिन्दी शब्दों से गर्भित हैं। पाँचवीं गद्दी के अधिकारी गुरु अर्जुन जी की रचनाएँ तो सामयिक हिन्दी भाषा का ही उदाहरण हैं। नौवीं गद्दी के अधिकारी गुरु तेगबहादुर के भजन तो बिलकुल हिन्दी भाषा में ही लिखे गये हैं। उनके पुत्र दसवीं गद्दी के अधिकारी गुरु गोविन्दसिंह ने हिन्दी भाषा में एक विशाल ग्रन्थ ही लिख डाला जो आदिग्रन्थ साहब के ही बराबर है और दशम ग्रन्थ कहलाता है।[6]

कबीरदास ने इस भाषाई और वैचारिक क्रांति को रेखांकित करते हुए कहा था–

"संस्कृत है कूप जल, भाखा बहता नीर।"[7]

हिंदी साहित्य ने वेद, उपनिषद, योग और दर्शन के जटिल अमूर्त विचारों को लोकभाषा (अवधी, ब्रज, खड़ी बोली) में रूपांतरित कर दिया, जिससे समाज के अंतिम व्यक्ति तक ज्ञान की पहुँच संभव हो सकी।

हिंदी साहित्य केवल आध्यात्मिक ज्ञान तक सीमित नहीं रहा। हिंदी प्रदेश की कृषि–संस्कृति, मौसम विज्ञान, जड़ी–बूटियों के प्रयोग, और लोक–मनोविज्ञान को साहित्य में गहराई से पिरोया गया। उदाहरण के लिए, घाघ और भड्डुरी की कहावतें भारतीय कृषि–विज्ञान, खगोल और मौसम विज्ञान का व्यावहारिक दस्तावेज हैं। यह प्रत्यक्ष प्रेक्षण और लोक–वैज्ञानिकी पर आधारित है, जो भारतीय ज्ञान परंपरा की व्यावहारिक प्रासंगिकता को सिद्ध करता है। हिंदी साहित्य ने भारतीय दर्शन के वसुधैव कुटुंबकम् और सर्वजन हिताय के सिद्धांत को केवल विचार तक सीमित न रखकर उसे सामाजिक समानता की लड़ाई से जोड़ा। सिद्धों, नाथों, कबीर, रैदास और आधुनिक युग में प्रेमचंद व निराला तक हिंदी साहित्य ने जन्म आधारित उच्चता का खंडन कर श्कर्मश और श्चेतनाश पर आधारित मानव मूल्य की स्थापना की।

विभिन्न उदाहरणों से साहित्य और ज्ञान परंपरा का परस्पर संबंधरू ऐतिहासिक विकास क्रम–

भारतीय ज्ञान परंपरा और हिंदी साहित्य के अटूट संबंध को इतिहास ग्रंथों (आचार्य रामचंद्र शुक्ल, डॉ. हजारीप्रसाद द्विवेदी, डॉ. रामविलास शर्मा) के साक्ष्यों के आलोक में कालखंड अनुसार समझा जा सकता है।

1. आदिकालः सिद्ध, नाथ और जैन साहित्य में ज्ञान परंपरा का बीजारोपण

आदिकाल में बौद्ध धर्म की वज्रयान शाखा से निकले सिद्धों और गोरखनाथ के नाथ पंथ ने हिंदी साहित्य के माध्यम से भारतीय योग, तंत्र और शरीर–विज्ञान का जन–सामान्य में प्रसार किया। योग और शरीर–विज्ञान के साथ नाथ साहित्य ने हठयोग, इड़ा–पिंगला–सुषुम्ना, और श्षट्चक्र भेदन के अमूर्त ज्ञान को सरल भाषा में प्रस्तुत किया।

डॉ. हजारीप्रसाद द्विवेदी ने हिंदी साहित्य का आदिकाल में लिखा है–"

नाथ पंथ के सिद्धों ने जिस योग–मार्ग का प्रवर्तन किया, वह भारतीय ज्ञान परंपरा का वह व्यावहारिक पक्ष था जिसने आगे चलकर कबीर और संपूर्ण संत काव्य की पीठिका तैयार की।"[8]

गोरखनाथ का वाणी साहित्य–

"नौ लख पातरी आगे नाचे, पीछे सहज अखाड़ा।
ऐसे मन लै जोगी खेलै, तब अंतरि बसै भंडारा"[9]

यह पंक्तियाँ बाह्य आडंबरों को नकार कर श्मानसिक संतुलनश और श्मनोविज्ञानश के संयम का पाठ पढ़ाती हैं।

हिंदी का लोक–साहित्य व्यावहारिक विज्ञान से भरा पड़ा है। घाघ और भड्डुरी की कहावतों में वर्षा के पूर्वानुमान, खगोल और खेती–किसानी के सटीक वैज्ञानिक नियम संकलित हैं। इसी तरह नाथ साहित्य में हठयोग और शरीर–विज्ञान का ज्ञान सुरक्षित है। महात्मा गोरखनाथ ही ऐसे पहले ब्राह्मण हैं जिन्होंने संस्कृत का विद्वान होने पर भी हिंदी भाषा के गद्य और पद्य में धार्मिक ग्रंथ निर्माण किये। जनता पर प्रभाव डालने के लिए उसकी बोल–चाल की भाषा ही विशेष उपयोगिनी होती है।[10]

2. भक्तिकालः अद्वैत दर्शन, भक्ति–शास्त्र और लोकमंगल का महाविस्फोट

भक्तिकाल में भारतीय ज्ञान परंपरा अपनी पूरी सामाजिक और वैचारिक ताक के साथ प्रकट हुई। यहाँ दर्शन केवल दिमागी कसरत न रहकर जीवन जीने की कला बन गया।

(क) कबीर और संत काव्यः रेडिकल वैचारिक क्रांति

कबीरदास ने उपनिषदों के अद्वैतवाद को स्वीकार किया, लेकिन उन्होंने इसे सामाजिक विषमता पर प्रहार करने का अस्त्र बनाया। कबीर का ज्ञान पुस्तकीय (शब्दाडंबर) न होकर प्रत्यक्ष आँखों देखी वैज्ञानिक यथार्थवाद पर आधारित था। अद्वैत दर्शन और समरसतारू कबीर और रैदास जैसे संतों ने उपनिषदों के अद्वैतवाद (सभी जीवों में एक ही चेतना) का प्रयोग सामाजिक विषमता और जाति–पांति के खंडन के लिए किया।

"तू कहता कागद की लेखी, मैं कहता आँखिन की देखी।[11]

अद्वैत चेतना का सामाजिक अनुप्रयोग करते हुए कबीर ने जाति–पांति का खंडन किया–

"एक बूंद ते सब जग उपजिओ, कौन भले को मंदे।"

हिंदी के संत कवियों ने वेदों और उपनिषदों के अमूर्त सिद्धांतों को लोकभाषा में ढालकर समाज के अंतिम व्यक्ति तक पहुँचाया। यह विचार ऋग्वेद के पुरुषसूक्त के उस उदात्त रूप की पुनर्व्याख्या है जो हर जीव में एक ही ब्रह्म की सत्ता देखता है।

(ख) तुलसीदास और अवधी साहित्यः समन्वयवाद और समाजशास्त्र

तुलसीदासकृत रामचरितमानस भारतीय ज्ञान परंपरा का महाकोश है। इसमें दर्शन, राजनीतिशास्त्र, समाजशास्त्र, नीतिशास्त्र और कुटुंब–प्रबंधन का अद्भुत समन्वय है। अयोध्या सिंह उपाध्याय हरिऔध रामचरितमानस की भारतीय परंपरा में योगदान के विषय में लिखते हैं वे कहते हैं कि– त्याग मानसिक होता है और उसमें वह शक्ति होती है जो देश, जाति, समाज और मानवीय आत्मा को बहुत उन्नत बना देती है। जो अपने गृह को, परिवार को, पड़ोस को, ग्राम को अपनी सहानुभूति, सत्य व्यवहार और त्याग–बल से उन्नत नहीं बना सकता, उसका देश और जाति को ऊँचा उठाने का राग अलापना अपनी आत्मा को ही प्रसारित नहीं करना है, प्रत्युत दूसरों के सामने ऐसे आदर्श उपस्थित करना है जो लोक–संग्रह का बाधक है।[12]

रामचरितमानस में उत्तरकांड का काकभुशुंडि–गरुड़ संवाद वस्तुतः ज्ञान और भक्ति के दार्शनिक संबंध की गहन व्याख्या करता है। तुलसीदास लिखते हैं–

"ज्ञान कि भगतिहि अंतर काहा। सावधान सुनु सोइ खगनाहा
ज्ञान विराग जोग बिज्ञाना। ए सब पुरुष सुनहु हरि जाना"[13]

यहाँ तुलसी ज्ञान को विज्ञाना (विशिष्ट ज्ञान या विवेक) से जोड़ते हैं, जो भारतीय ज्ञान परंपरा की वैज्ञानिकता का सबसे बड़ा प्रमाण है। लोक–मंगल और व्यवस्थाः गोस्वामी तुलसीदासःत रामचरितमानसश केवल धार्मिक ग्रंथ नहीं, बल्कि दर्शन, राजनीतिशास्त्र, कुटुंब–प्रबंधन और नीतिशास्त्र का महाकोश है। रामचरितमानस से हमारी ज्ञान परंपरा और भी समृद्घ हुई है आलोचक हरिऔध जी लिखते हैं– "गोस्वामी जी का प्रधान ग्रंथ रामायण है। उसमें धर्मनीति, समाजनीति, राजनीति का सुन्दर से सुन्दर चित्रण है। गृहमेधियों से लेकर संसार–त्यागी संन्यासियों तक के लिए उसमें उच्च से उच्च शिक्षाएं मौजूद हैं। कर्तव्य क्षेत्र में उतरकर मानव किस प्रकार उच्च जीवन व्यतीत कर सकता है।[14]

(ग) सूरदास और ब्रज साहित्यरू बाल–मनोविज्ञान और सौंदर्यशास्त्र

सूरदास का सूरसागर केवल कृष्ण–लीला का वर्णन नहीं है, बल्कि वह बाल–मनोविज्ञान और वात्सल्य रस का ऐसा सूक्ष्म वैज्ञानिक अध्ययन है जो विश्व साहित्य में अप्रतिम है।

सूरदास ने बाल–सुलभ चेष्टाओं, ईर्ष्या, कौतूहल और माता–पिता के वात्सल्य का जो सूक्ष्म प्रत्यक्ष निरूपण किया, वह भारतीय सौंदर्यशास्त्र की महान उपलब्धि है। सूरदास का सूरसागर वात्सल्य रस और सूक्ष्म बाल–मनोविज्ञान का अनूठा भंडार है।

3. रीतिकालः काव्यशास्त्र, भाषाविज्ञान और व्यावहारिक ज्ञान

रीतिकाल को प्रायः केवल श्रृंगार और दरबारी संस्कृति तक सीमित मान लिया जाता है, परंतु ज्ञान परंपरा की दृष्टि से यह काल काव्यशास्त्र , लक्षण–ग्रंथ, और छंदशास्त्र के वर्गीकरण का काल था।

संस्कृत काव्यशास्त्र का हिंदीकरणः चिंतामणि, केशवदास, मतिराम, और आचार्य देव ने संस्कृत के ध्वन्यालोक, काव्यप्रकाश और रसगंगाधर के जटिल सिद्धांतों को ब्रजभाषा में प्रस्तुत किया। केशवदास का शास्त्रीय ज्ञान– केशवदासकृत कविप्रिया और रसिकप्रिया वस्तुतः कवियों के लिए काव्य–संरचना का तकनीकी और व्यावहारिक

दिशानिर्देश प्रस्तुत करती हैं। नीति और व्यावहारिक ज्ञानः वृंद, गिरधर कविराय और बिनाल जैसे कवियों ने व्यावहारिक जीवन–प्रबंधन और नीति–शास्त्र को छंदों में ढाला।

आलोचक रवीन्द्रनाथ श्रीवास्तव अपनी किताब हिंदी भाषा का समाजशास्त्र में देवनागरी लिपि का इतिहास पर इतिहासकार डॉ ग्रियर्सन का व्यक्तव्य उदघृत करते है जिसमें वह कहते हैं कि–"हिंदी, हिंदुस्तानी भाषा का वह रूप है जिसमें संस्कृत शब्दों की बहुलता होती है और जो देवनागरी लिपि में लिखी जा सकती है।"

इस काल खंड में नायिका का नकशिख वर्णन हो या राजाओं की प्रशस्ति के गीत हमने इनसे कुछ ज्ञान लिया हो या न लिया हो परन्तु जो भाषा इस काल खंड में थी वह भाषाई धरोहर हमारे ज्ञान संकलन में अपनी तरह का योगदान देती है।

4. आधुनिक कालः वैज्ञानिक चेतना, इतिहास–दृष्टि और नवजागरण

19वीं सदी के उत्तरार्ध में भारतीय नवजागरण के साथ हिंदी साहित्य का आधुनिक काल शुरू हुआ। इस काल में भारतीय ज्ञान परंपरा का पश्चिमी आधुनिकता, तर्कवाद और विज्ञान के साथ सीधा संवाद हुआ।

(क) भारतीय नवजागरण एवं हिंदी का आधुनिक काल को हम विभिन्न योगदान के रूप में देखते हैं जिसने भारतीय ज्ञान परंपरा को समृद्ध किया। भारत की भूमि पर महान कवि रहें जिन्होंने न केवल समाज बल्कि संपूर्ण राष्ट्र को जाग्रत करने का काम किया है जिसमें हम बड़े ही गर्व से भारतेन्दु हरिश्चंद्र का नाम ले सकते हैं। भारतेंदु हरिश्चंद्र ने अपनी लेखनी के माध्यम से जातीय चेतना एवं भाषाई स्वाभिमान की जो लौ भारतीयों के भीतर जगाई उसने भारतबोध को और मजबूत किया और हमारी गौरवशाली परंपरा को पुनरू जाग्रत करने का काम किया। भारतेंदु हरिश्चंद्र ने भारत दुर्दशा और अपनी पत्रिकाओं (कविवचनसुधा) के माध्यम से देश के अतीत के ज्ञान को आधुनिक राष्ट्र–निर्माण से जोड़ा। उन्होंने घोषणा की–

"निज भाषा उन्नति अहै, सब उन्नति को मूल।[16]

इसी कड़ी में आगे राष्ट्रीय चेतना से औत–प्रौत समाज और लेखक वर्ग को दिशा और दशा देने में आचार्य महावीर द्विवेदी का योगदान भी अविस्मरणीय है। युग अनुशासन, ज्ञान–विज्ञान एवं वैज्ञानिक दृष्टिकोण के लिए हम उनके योगदान को नहीं भूल सकते। हिंदी को सर्वव्यापी और गद्य की भाषा बनाने में उनका अनुशासन भारत को भाषाई एकता के सूत्र में बांधने के लिए महत्त्वपूर्ण है। इसके बाद पंडित महावीर प्रसाद द्विवेदी ने श्सरस्वतीश पत्रिका (1900 ई.) का संपादन संभालकर हिंदी साहित्य को केवल भावुकता से निकालकर ज्ञान–विज्ञान की कसौटी पर कसा। उन्होंने अर्थशास्त्र (संपत्तिशास्त्र), इतिहास, भूगोल, पुरातत्व और भौतिक विज्ञान पर हिंदी में लेख लिखवाए। उन्होंने स्पष्ट किया कि साहित्य केवल कल्पना नहीं, बल्कि "ज्ञान–राशि के संचित कोष का नाम साहित्य है।"[17]

आधुनिक काल में आचार्य महावीर प्रसाद द्विवेदी ने श्सरस्वतीश पत्रिका के माध्यम से हिंदी में इतिहास, अर्थशास्त्र, भूगोल और भौतिकी के ज्ञान का विस्तार किया।

(ख) छायावादः राष्ट्रीय चेतना, दार्शनिकता और आधुनिक मनोविज्ञान

छायावाद काल को आलोचक नामवर सिंह ने राष्ट्रीय चेतना के रूप में देखा जिससे इस काल खंड की कविताओं का योगदान और भी अधिक बढ़ गया। मानवतावाद एवं सौंदर्य–दर्शन इन कविताओं की अन्य महत्वपूर्ण उपलब्धियों में से एक है। प्रगतिवाद–प्रयोगवाद समकालीन विमर्शों को जीवित कर समाज के भीतर तक झांकने की वैचारिक दृष्टि का सृजन करती है जिसमें मार्क्सवाद, यथार्थवाद एवं उत्तर–आधुनिक विमर्श शामिल है परन्तु इनको देखने जानने की दृष्टि और समाधान केवल भारतीय बोध के केन्द्र में ही संभव है। इन्हें ओर अधिक विस्तार से समझा जा सकता है। वहीं जयशंकर प्रसाद की कामायनी उपनिषदीय ज्ञान और आधुनिक मनोविज्ञान (बुद्धि और हृदय के संतुलन) का अद्भुत संश्लेषण प्रस्तुत करती है। छायावाद के चार प्रमुख स्तंभोंकृ प्रसाद, निराला, पंत और महादेवी– ने भारतीय ज्ञान परंपरा के अद्वैत दर्शन और शैवागम को आधुनिक चेतना के साथ जोड़ा।

कवि, नाटककार, और उपन्यासकार जयशंकर प्रसाद द्वारा रचित कामायनी एक महाकाव्य ही नहीं बल्कि भारतीय ज्ञान परंपरा का एक ऐसा अंश है जिसे सामान्य रूप से जानना संभव नहीं है। कामायनी वस्तुतः ऋग्वेद, शतपथ ब्राह्मण और प्रत्यभिज्ञा दर्शन (कश्मीर शैव दर्शन) का आधुनिक मनोवैज्ञानिक पुनराख्यान है। कामायनी में प्रसाद जी ने इड़ा (बुद्धि/तर्क) और श्रद्धा (हृदय/भावना) के संतुलन को ही मानव सभ्यता के विकास का

मूल आधार माना है। यह आज के कृत्रिम बुद्धिमता के दौर में अत्यंत प्रासंगिक है–

"ज्ञान दूर कुछ क्रिया भिन्न है, इच्छा क्यों पूरी हो मन की।
एक दूसरे से न मिल सके, यह विडंबना है जीवन की"[18]

कामयानी में करूणा के जिक्र हुआ है यह एक बौद्ध अवधारणा आलोचक रमेशचंद्र शाह लिखते हैं– "आयरिश कवि येट्स ने जिसे भारतीय ज्ञान–परंपरा (और अनुभव–परंपरा) को बुझती हुई जोत कहा था– प्रसादजी के भीतर इसकी तीखी चेतना मौजूद थी और उसके साथ ही साथ उसे जलाए रखने की चिंता और विवेक पीड़ा भी।[19]

प्रसाद के नाटक सुगठित हैं उनकी चिंता का केन्द्र चरित्र नहीं, उससे अधिक कुछ ओर है। दुख, निराशा, क्षोभ, और विरक्ति के साथ आनंद की प्रधानता उनके नाटकों में दिखती है। जयशंकर प्रसाद कृत चंद्रगुप्त नाटक का प्रसिद्ध गीत भारतीयबोध को बहुत अच्छे से परिभाषित करता है। प्रोफेसर लालचंद राम जी लिखते हैं– "भारतीय सांस्कृतिक चेतना का साहित्यिक स्वरूप महाकवि जयशंकर प्रसाद की पंक्ति– अरुण यह मधुमय देश हमारा....., में सजीव रूप से अभिव्यक्त होता है। यह कविता केवल भारत की प्राकृतिक छटा का वर्णन नहीं करती बल्कि उसकी सांस्कृतिक चेतना, उदारता तथा मानवतावादी दृष्टि का काव्यात्मक उद्घोष है।"[20] सूर्यकांत त्रिपाठी निराला की कविता श्राम की शक्तिपूजा में भारतीय शक्ति–साधना और उपनिषदीय ज्ञान का आधुनिक संघर्ष चेतना से समाकलन दिखता है।

(ग) प्रगतिवाद, प्रयोगवाद और समकालीन दौररू रेडिकल जन–दृष्टि

आधुनिक हिंदी साहित्य में रामविलास शर्मा, मुक्तिबोध, नागार्जुन और अज्ञेय जैसे चिंतकों ने भारतीय परंपरा की प्रगतिशील और रेडिकल धाराओं को पहचाना। डॉ. रामविलास शर्मा ने अपने इतिहास–ग्रंथों (भारतीय साहित्य की भूमिका, महावीरप्रसाद द्विवेदी और हिंदी नवजागरण) में यह सिद्ध किया कि भारतीय ज्ञान परंपरा का मूल लोक–संस्कृति में है, न कि सामंती ढाँचों में।

गजानन माधव मुक्तिबोध ने फैंटेसी और अंतःकरण के आयत के माध्यम से आधुनिक मानव के आत्म–संघर्ष और ज्ञान–मीमांसा को नया आयाम दिया। प्रोफेसर लालचंद राम संपूर्ण हिंदी साहित्य का मूल्यांकन करते हुए कहते हैं कि–"भारतीय परंपरा में 'जियो और जीने दो', 'अप्प दीपो भव', 'अहिंसा परमो धर्म', 'सबका मालिक एक', 'कण–कण में ईश्वर', 'निर्गुण–सगुण साधना', 'आस्तिक–नास्तिक विमर्श', 'सिद्ध–नाथ परंपरा' तथा 'लोकमंगल' जैसी अवधारणाएं परस्पर विरोधी नहीं बल्कि एक ही व्यापक सभ्यतागत चेतना के पूरक रूप है।[21]

निष्कर्ष

उपर्युक्त ऐतिहासिक और वैचारिक विश्लेषण से यह पूरी तरह स्पष्ट होता है कि हिंदी साहित्य केवल भाषा या गद्य–पद्य का ढाँचा मात्र नहीं है, बल्कि वह भारतीय ज्ञान परंपरा का जीवंत, गतिमान और रेडिकल संवाहक है। यदि संस्कृत ने भारतीय ज्ञान परंपरा के बीज बोए, तो हिंदी साहित्य ने उस बीज को एक बड़े वृक्ष में बद दिया, जिसकी छाया में समाज का हर वर्ग आश्रय पा सका। हिंदी साहित्य ने भारतीय ज्ञान के मूल तत्वों में अद्वैत चेतना, लोकमंगल, प्राकृतिक सहअस्तित्व, वैज्ञानिक प्रेक्षण और सामाजिक समानता समाहित है।

आज के २१वीं सदी के डिजिटल, भमंडलीकृत और कृत्रिम बुद्धिमता आधारित युग में, जहाँ मनुष्य एकाकीपन, मानसिक तनाव और पर्यावरणीय विनाश का सामना कर रहा है, हिंदी साहित्य में निहित भारतीय ज्ञान परंपरा एक नई दिशा दिखाती है। यह साहित्य सिखाता है कि तकनीक और विकास तभी सार्थक हैं जब उनके मूल में श्लोकमंगल और मानवीय संवेदना हो। संक्षेप में कहें तो, हिंदी साहित्य और भारतीय ज्ञान परंपरा का संबंध शरीर और आत्मा का संबंध है। यह परंपरा अतीत का कोई जड़ स्मारक नहीं, बल्कि भविष्य के निर्माण की एक उर्जावान और वैज्ञानिक कुंजी है।

Author's Declaration:

I/We, the author(s)/co-author(s), declare that the entire content, views, analysis, and conclusions of this article are solely my/our own. I/We take full responsibility, individually and collectively, for any errors, omissions, ethical misconduct, copyright violations, plagiarism, defamation, misrepresentation, or any legal consequences arising now or in the future. The publisher, editors, and reviewers shall not be held responsible or liable in any way for any legal, ethical, financial, or reputational claims related to this article. All responsibility rests

solely with the author(s)/co-author(s), jointly and severally. I/We further affirm that there is no conflict of interest financial, personal, academic, or professional regarding the subject, findings, or publication of this article.

संदर्भ

1. हिंदी भाषा का समाजशास्त्र, लेखक– रवीन्द्रनाथ और बीना श्रीवास्तव, संपादक डॉ महेन्द्र, डॉ दिलीप सिंह, राधाकृष्ण प्रकाशन प्रारम्भ. लग, पहला संस्करण 1994, पृ सं 295।
2. लेख– भारतीय ज्ञान–परंपरा की निरंतरता में रचित साहित्य और भारतबोध, लेखिका– कुमुद शर्मा, साहित्य अमृत पत्रिका, अंक अगस्त 2026, पृ.सं 92।
3. हिंदी भाषा का समाजशास्त्र, लेखक– रवीन्द्रनाथ श्रीवास्तव, बीना श्रीवास्तव, संपादक– डॉ. महेन्द्र, डॉ. दिलीप सिंह, राधा प्रकाशन प्रा.लि, पृ.सं 132।
4. भाषा विज्ञान प्रवेश एवं हिंदी भाषा, लेखक दृभोलानाथ तिवारी, संपादक–डॉ. जयंती प्रसाद नौटियाल, किताबघर प्रकाशन, प्र सं 2007, पृ.सं 164।
5. लेख– भारतीय ज्ञान–परंपरा की निरंतरता में रचित साहित्य और भारतबोध, लेखिका– कुमुद शर्मा, साहित्य अमृत पत्रिका, अंक अगस्त 2026, पृ.सं 92।
6. हिंदी भाषा और साहित्य का विकास, अयोध्या सिंह उपाध्याय हरिऔध, अनन्य प्रकाशन, संस्करण 2022, (पृ सं 136।
7. (कबीर ग्रंथावली, श्यामसुंदर दास)
8. (हिंदी साहित्य का आदिकाल, हजारी प्रसाद द्विवेदी)
9. (गोरखनाथ)
10. हिंदी भाषा का समाजशास्त्र, लेखक– रवीन्द्रनाथ श्रीवास्तव, बीना श्रीवास्तव, संपादक– डॉ. महेन्द्र, डॉ. दिलीप सिंह, राधा प्रकाशन प्रा.लि, पृ.सं 105)
11. (कबीरग्रंथावली, श्यामसुंदरदास)
12. हिंदी भाषा और साहित्य का विकास, अयोध्या सिंह उपाध्याय हरिऔध, अनन्य प्रकाशन, संस्करण 2022, पृ सं 176।
13. उतरकांड, रामचरितमानस, तुलसीदास।
14. हिंदी भाषा और साहित्य का विकास, अयोध्या सिंह उपाध्याय हरिऔध, अनन्य प्रकाशन, संस्करण 2022, पृ सं 178–179।
15. रवीन्द्रनाथ श्रीवास्तव एवं बीना श्रीवास्तव, हिंदी भाषा का समाजशास्त्र , संपादक– डॉ. महेन्द्र,राधाकृष्ण प्रकाशन, प्रा.लि प्र.सं 1994, पृ.सं 295)
16. मातृभाषा प्रेम पर दोहे, भारतेन्दु हरिश्चंद्र, कविता कोश kavitakosh.org.
17. रामचंद्र शुक्ल, हिंदी साहित्य का इतिहास।
18. कामायनी, जयशंकर प्रसाद, कविता कोश, kavitakosh.org.
19. भारतीय साहित्य के निर्माता, जयशंकर प्रसाद, लेखक रमेशचंद्र शाह, साहित्य अकादेमी, नई दिल्ली, प्रथम संस्मरण 1979, पुनर्मुद्रण संस्मरण 2012, पृ.सं 91)
20. (लेख– भारतबोध और भारतीय ज्ञान–परंपरा, लेखक– लालचंद राम, साहित्य अमृत पत्रिका, अंक अगस्त 2026, पृ.सं 124)
21. (लेख– भारतबोध और भारतीय ज्ञान–परंपरा, लेखक– लालचंद राम, साहित्य अमृत पत्रिका, अंक अगस्त 2026, पृ.सं 123)

Cite this Article

'डॉ. ममता रावत', 'भारतीय ज्ञान परंपरा और हिंदी साहित्यः चेतना, ज्ञान–दृष्टि और ऐतिहासिक विकास', Research Vidyapith International Multidisciplinary Journal, ISSN: 3048-7331 (Online), Volume:3, Issue:9, September 2026.

"Copyright © 2026 The Author(s). This work is licensed under Creative Commons Attribution 4.0 (CC-BY), allowing others to use, share, modify, and distribute it with proper credit to the author."